International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232
www.hindijournal.com
Volume 1; Issue 1; November 2015; Page No. 13-15

आधुनिक काल के उपन्यासो में मनोवैज्ञानिकता का पुट

गीता यादव

ऐसिस्टेंट प्रोफेसर, हिंदी विभाग, डी.ए.वी. महिला महाविद्यालय, कोसली

सारांश

आधुनिक काल में उपन्यासकारों ने मनोवैज्ञानिकता के क्षेत्र में प्रवेश किया। इनमें प्रमुख रुप से अज्ञेय, जैनेन्द्र, इलाचन्द्र जोशी तथा मन्नू भंडारी का नाम लिया जा सकता है। इन्होंने मानव मन के सूक्ष्म उद्गारों को अपने उपन्यासो में उकेरा है। जैनेन्द्र का 'परख' उपन्यास इस दृष्टि से महत्वपूर्ण है। इसमें विद्यमान नारी पात्रों का मनोवैज्ञानिक रुप से विश्लेषण किया गया है। मन्नू भंडारी का आपका बंटी भी मनोवैज्ञानिकता का एक सफल प्रयोग है।

कूट शब्द– मनोवैज्ञानिकता, विश्लेषण, समस्याए

प्रस्तावना

मनोवैज्ञानिक उपन्यास मानव आचरण औश्र उसके प्रेरक मन के पारस्परिक संबंध का विश्लेशन करता है। यह तथ्य मनोवैज्ञानिक उपन्यासकार के लिए गौण है। उसका ध्यान मुख्य रुप से इस बात पर रहता है कि मनुष्य जो कुछ करता है, वह क्यों और कैसे करता है। मनोवैज्ञानिक उपन्यास की इस मूल विशेषता को स्पष्ट करने के लिए प्रेमचंद्र की उपन्यास संबंधी परिभाषा यहाँ उद्धरणीय और विवेचनीय है– ''मैं उपन्यास को मानव चरित्र का चित्र मात्र समझता है।'' वास्तव में मानक चरित्र एक गतिशील प्रकिया है, इसके अंर्तगत मानव मन बाह्य परिस्थितियों से घात करते हुए विकासोन्मुख होता है, चरित्र की यह गतिविधि सुनिशिचत घटनाओं का रुप धारण कर साक्षत मूर्तिमान हो उठ्ती है।

मनोवैज्ञानिक उपन्यास का रुप धारण कर साक्षात मूर्तिमान हो उठ्ती है।

मनोवैज्ञानिक उपन्यास में पात्र का मानसिंक गठ्न एवं तत्सम्बंधी प्रकिया उपन्यास के अर्थ और इति दोनो है। मनोवैज्ञानिक उपन्यास का मूलत्त्व पात्रों का मनोचित्रण है। उपन्यास के शेष तत्व इसी केन्द्र से संचालित होकर इससे इर्द–गिर्द चक्कर काट्ते है। मनोवैज्ञानिक उपन्यासकार पात्रों के आंतरिक जीवन को जगाना चाहता है। वह व्यक्ति की सामाजिक स्थिति को सुदृढ़ करने की अपेक्षा व्यक्ति में निहित नैसर्गिक शक्ति को पहचानने पर बल देता है और मानव मन के झरोखे से बाह्य जीवन का अवलोकन करता है। सर्वप्रथम हम जैनेन्द्र के पात्रों का विश्लेषण करते है। जैनेन्द्र के पात्रों में यह शंका उलझन दिखाई देती है कि स्त्रियाँ संबंधों की मर्यादा में रहते हुए भी स्वतंत्र व्यक्ति बनाए रखना चाहती है जो निः संदेह भारतीय परिवेश में आल यानि जैनेन्द्र के इन उपन्यासों के समय के 60–70 वर्ष बाद भी यर्थाथ नहीं है जैनेन्द्र जानते थे कि वह जिस नारी स्वतुत्रता के विषय में सोच रहें है, वह एक दुर्लभ वस्तु है। समाज के स्वीकार और प्रतिकिया के प्रश्नों से वे भी उलझे थे इसलिए वे प्रश्नों को उठाते तो है किंतु उनका उत्तर सपष्ट रुप से नहीं देते बल्कि कहानी को एक मोड़ पर लाकर छोडत्र देते जहाँ से पाठक की कल्पना और भव–बुद्धि अपने इच्छानुसार विचरती है। बहुधा यह स्थिती खोज भी उत्पन्न करती थी विशेषकर उस समय में, जब ये उपन्यास लिखे गये थे।

जैनेन्द्र की कहानियों में भी हमें यह नई दिशा दिखई देती है। आलोचको का मानना है कि 'उन्होने कहानी को' घटना के स्तर से उठाकर 'चरित्र' और मनोवैज्ञानिक सत्य पर लाने का प्रयास किया। उन्होंने कथा वस्तु को सामाजिक धरातल से समेट कर व्यक्तिगत और मनोवैज्ञानिक भूमिका पर व्यक्तिगत और मनोवैज्ञानिक भूमिका पर प्रतिष्ठित किया। चाहे उनकी कहानी 'हत्या' हो या 'खेल' 'अपना–अपना भगय' 'बाहुबली' 'पाजेब' ध्रुवतारा,' दो चिड़ियाँ आदि कहानियों में व्यक्तिमन की शंकाओं, प्रश्नों को प्रस्तुत करती है।

मध्यवर्ग की ढुलमुल मानसिकता और प्रेम का यथार्थ अनिर्णय की ढुलमुल मानसिकता और प्रेम का यथार्थ अनिर्णय निम्न मध्य वर्ग की चारित्रिक विशेषता है, जिसे चंदर के व्यक्तित्त्व में बखूबी देखा जा सकता है। प्रेम में समर्पण और बलिदान को चुना और इस चुनाव ने दो युवाओं को दूर कर दिया। वह बेहद

प्रतिभाशाली है, सुधा के पिता उसे पसंद भी करते है, लेकिन दो भिन्न जातियों के बीच कैसे एक संबंध विवाह तक पहुंच सकता है। इस पर सुधा के पिता का मौन बहुत कुछ कह देता है। वे भी तो उसी मध्यवर्गीय मानसीकता के शिकार है, जो, छ्टे दशक में एक आदर्श समाज की परिकल्पना में सामाजिक जीवन में कोई बदलाब नहीं चाहता था। यर्थाथ में घट रहें प्रेम को अनदेखा कर आदर्शवादी और आज्ञाकारी बना रहना इस उपन्यास के तमाम पात्रों की चारित्रिक विवशता है। प्रेम का आदर्श स्वरुप क्या हो इस पर हर काल–खण्ड में बहस चलती रहती है। जैनेन्द्र कुमार की सर्वप्रथम औपन्यासिंक कृति 'परख' का पकाशन सन् 1929 में हुआ सत्यधन, कट्टो, बिहारी और गरिमा नामक पात्र–पत्रियों के चरित्र पर आधारित यह मनोवैज्ञाानिक कथा अप्रत्यक्ष रुप से विधवा विवाह की समस्या से संबंध रखती है, जो भरतेंदुयुगीन औपन्यासिंक प्रवृत्ति है। जैनेन्द्र के आगामी उपन्यासों की अपेक्षा 'परख' में चरित्र–चित्रण अशक्त प्रतीत होता है। मुख्यतः इसी कारण से 'परख' को वह महत्व नीहीं प्राप्त हो सका, जो जैनेन्द्र के अन्य उपन्यासों विषेश रुप से 'सुनीता' तथा 'त्याग पत्र' को प्राप्त हुआ। इसका एक कारण इस उपन्यास की अविशवसनीय कथा भी है। इसके प्रधान पात्र–पात्रियों अपना स्वतंत्र व्यक्तित्व रखते हुए भी अधिकांश नाटकीय व्यवहार करते है। आदर्शवादी कथा–तत्व यत्र–तत्र उभरे हुए है। जिनमें आत्मबलिदान की भवना को प्रमुखता मिली है। अज्ञेय कृत शेखर की एक जीवनी प्रेमचंद के बाद हिंदी उपन्यास को नइ संपन्न्ता देने वाले लेखकों में अज्ञेय का स्थान जितना प्रमुख है, उनके औपन्यासिक कृतित्व का मूल्यांकन उतना ही विवादास्पद है। अनेक तीनों उपन्यासों ने साहित्यिक परिवेश को काफी आन्दोलित किया है। यद्पि परिवेश को काफी आन्दोलित किया है। यद्यपि अज्ञेय ने कविता को ही अपने लिए अभिव्यक्ति का आधुनिक उपयुक्त माध्यम माना है पर लेखक के रुप में उन्हें मान्यता उनके प्रथम उपन्यास 'शेखर–एक जीवनी' से ही प्राप्त हुई, जिसके प्रकासित होने पर नेमिचंद्रजैन के शब्दों में एक सर्वथा नवीन साहित्यिक स्तर की उपलब्धि का भव समान रुप से हिंदी पाठक औश्र समालोचक को हुआ था और समूचा साहित्यिक वातावरण नये आन्दोलन से स्पन्दित हो उठा था। 'नदी के द्विप' में भी एक विषेश लेखन–क्षमता का परिचय अज्ञेय ने दिया, लेकिन, वह ''शेखर –एक जीवनी" की मूल संवेदना" से जुड़ा हुआ है। 'अपने–अपने अजनबी' फिर से सर्वथा नए ढंग की कृति के रुप में सामने आया। इन तीनों कृतियों की प्रशंसा औश्र आलोचना दोनो खूब हुई ।

'शेखर एक जीवनी' की भूमिका में लेखक ने स्पष्ट कर दिया है। कि 'शेखर में मेरा –पन कुछ अधिक है, इलिश्ट का आदर्श मुझसे निभ नहीं हो सका है। लेखक की प्रमाणिकता जीवनी या आत्मकथा के आभाव में यह कहना कठिन है कि लेखक औश्र 'शेखर' में सुपृक्ति का स्वरुप कितना और कैसा है, पर इतना अंसदिग्ध रुप में कहा जा सकता है कि कृति की प्रकल्पना मूलतः औपन्यासिक है। और एक कल्पनात्मक जीवन चित्र ही उसमें प्रधान है। लेखक के अनुसार वह निषेधात्मक मुल्य को लेकर नहीं चला, मानव में उसकी आस्था है। और मूल–रुप से 'शेखर की जीवन दर्शन' स्वातंत्रय की खोज' है– टूटती हुई नैतिक रुढ़ियों के बीच निति के मुल्य–त्रोत की खोज।

'नदी के दि्वप' को लेकर उनका कहना है कि वह 'उस समाज का, उसके व्यक्तियों के जीवन का जिसका वह चित्र है, सच्चा चित्र है। 'अपने–अपने अजनबी' में उनके अनुसार मृत्यु साक्षात्कार को अन्य समस्याओं से अलग करके निस्संग रुप देखने का प्रयत्न किया गया है।

उपन्यास की भूमिका में लेखक ने शेखर के व्यक्तित्व कसे एक प्रकार के निर्यातवाद के अंतर्गत परिभाषित किया है। स्पष्ट ही 'ह निर्यातवाद मनोवैज्ञानिक निर्यातवाद है। शेखर के बचपन का उस पर पड़ने वाली छापों का लेखक ने विदम्ध चित्रण किया है और ऐसे जीवन चित्र को लेकर लिखा गया यह पहला उपन्यास है। लेखक ने बल्यकालीन प्रसंगों के चित्राण में जिस अंर्तदृष्टि का परिचय दिया है, वह कुछ सिद्ध निष्कर्षों के आग्रह के कारण धुंधला गई है। माँ के प्रति शेखर की घृणा को इंडिपस काप्लेक्स के मनोवैज्ञानिक सिद्धांत से व्याख्या की जा सकती है। उसकी घृणा इतीन तीव्र है कि अपनी गिरफ्तारी के बाद जब उसे झार का विचार आया तब यही कि 'जब सुनेंगी तब इस समाचार के प्रति उसका पहला भाव तो विजय का ही होगा, जैसे मैं तो जानती थी। मैंने कभी उसका विश्वास नहीं किया फिर वह दुःखी होगी पहला विचार तो यही होगा कि उससे यही आशा होनी चाहिए थी। और इस विचार ने उसे बड़ी सांतवना दी– पुलिस के अत्याचारो के प्रति सर्वथा निरपेक्ष बना दिया। सच पूछो तो मैं उसका भी विशवास नहीं करती। वह सम्भ्रान्त सा ठहर गया सा भव वह शेखर की ओर उठा हुआ अंगुठा इसका। माँ से सेबंध यह समृति–चित्र स्थायी हो गया है। माँ की मुत्यु पर दुःख का उसे नहीं होता और जब बहुत देर बाद पिंजर को हिला देने वाले रोदन में उसे राशि पाती है तो वह अप्रत्ययशित आचरण अवास्तविक लगता है। मानववादी एरिक फ्रॉम के अनुसार व्यक्ति के स्वतंत्र अस्तित्व की ओर बढने की अनिवार्य 'र्त है–मातृ सुरक्षात्मक छत्र–छाया की की चाह से मुक्ति। माता से जुड़ा व्यक्ति शैश्व में ही रह जाता है। शेखर स्वतंत्र नहीं हरो सका है। प्रम में भी वह माँ को ही खोजता है। यदि लेखक बालक शेखर का अध्ययन एक असंतुलित–विकास प्राप्त बालक के रुप में ही सीमित रखता तो वह बालमगन को उदघटित करने वाली एक यर्थथ कथा लिख रहा होता पर उसका संक्लप उस बालक को विद्रोही में बदलने का है और इसलिए शेखर के

व्यक्त्तिव में एक बुनियादी असंगति का समावेश हो गया है। माँ के प्रति उसके भाव में कोई जटिलता नहीं रह पाती।

आपो बंटी–मन्नू भंडारी– बाल मनोविज्ञान – प्रस्तुत उपन्यास में लेखिका ने प्रसिद्ध मनोविज्ञान प्रफायड, एडलर औश्र युग के सिंद्धांतो का आश्रय लेकर बंटी के अन्तद्वन्द्व और तज्जन्य कुंठाओं का अत्यंत सजीव और वैज्ञानिक आकलन प्रस्तुत किया है। बंटी की पारिवारिक स्थितियाँ सामान्य नहीं है, इसलिए उसके व्यवहार में अनेक असामान्यताएँ आ गई है। इसलिए उसके व्यवहार में अनेक असमान्यताओं आ गई है। उसका ईगो अत्यंत प्रबल है।इसलिए उसमें एकाधिकार की भवना सदैव विद्यमान है। उसके खिलौने हो या माता–पिता वह इन्हें किसी के साथ नहीं बाँट सकता। मीरा और डॉ0 जोशी के प्रति उसके मन में ई”र्या भाव है क्योंकि वह इन्हें मम्मी औश्र पापा के अलगाव का मूल कारण मानता है। सुखवाद (अपने ही सुख के बारे में सोचना) के कारण अपनी ही इच्छाओं की पूर्ति चाहता है।

बच्चे के व्यक्त्तिव–निर्माण में वंशागत विशेषताएं और परिवेश का महत्वपूर्ण योगदान होता है। बंटी स्वाभाव से जिज्ञासु है। कोई भी स्थ्तिी, हो व्यक्ति अथवा वास्तु वह प्रत्येक रुप को तर्क की कसौटी पर रखना चाहता है।

एडलर के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति में थेड़ी–बहुत हीन भवना होती है, जो उसे क्षति–पूर्ति के लिए सदैव प्रेरित करती रहती है। टीटू के साथ नोक–झोंक और उसकी माँ के ताने सुनकर बंटी स्वयं को उपेक्षित समझने लगता है। जिसकी पूर्ति वह माँ और पापा के प्रति एकाधिकार में पापा चाहता है, लेकिन असफल होकर विरोधी औश्र आक्रमक बन जाता है। पापा के पास जाकर भी उसे अपने प्रति कहीं कोई अपनापन दिखई नहीं देता और उसके मन में सदैव गूँजता है’ तीसरा बच्चा, पफालतू बंटी।

संदर्भ ग्रंथ

1. उपन्यास साहित्य : मनोवैज्ञानिक धारा– मनोज कुमार
2. हिंदी के मनोवैज्ञानिक उपन्यासकार – डॉ कुमार गणेश, डॉ0 उस0 के0 शर्मा
3. हिंदी के साहित्य और संवेदना का विकास– रामस्वरुप चतुर्वेदी पृष्ठ –289
4. अज्ञेय उपन्यास और कहानियाँ एक अध्ययन– अरविंद दर्शन
5. आपक बंटी– मन्नू भंडारी